गंगा सप्तमी पर विशेषः हिंदी काव्य में गंगा नदी

भारत की राष्ट्र-नदी गंगा जीवन ही नहीं, अपितु मानवीय चेतना को भी प्रवाहित करती है। हिन्दी काव्य साहित्य के आदि महाकाव्य 'पृथ्वीराज रासो' में 'गंगा' नदी की चर्चा अनेक प्रसंगों में की गई है-

इंदो किं अंदोलिया अमी ए चक्कीवं गंगा सिरे।

.....

एतने चरित्र ते गंग तीरे।

आदिकाल के दूसरे प्रसिद्ध ग्रंथ 'वीसलदेव रास' (नरपति नाल्ह) में गंगा का सम्पूर्ण ग्रंथ में केवल दो बार उल्लेख हुआ है-

कइ रे हिमालइ माहिं गिलउं

कइ तउ झंफघडं गंग-दुवारि।

.....

बहिन दिवाऊँ राइ की।

थारा ब्याह कराबुं गंग नइ पारि।

आदिकाल का सर्वाधिक लोक विश्रुत ग्रंथ जगनिक रचित 'आल्हखण्ड' में गंगा, यमुना और सरस्वती का उल्लेख है। कवि ने प्रयागराज की इस त्रिवेणी को पापनाशक बतलाया है-

प्रागराज सो तीरथ ध्यावौं। जहँ पर गंग मातु लहराय।।

एक ओर से जमुना आई। दोनों मिलीं भुजा फैलाय।।

सरस्वती नीचे से निकली। तिरबेनी सो तीर्थ कहाय।।

.....

सुमिर त्रिबेनी प्रागराज की। मज्जन करे पाप हो छार।।

शृंगारी कवि विद्यापति ने अपने पदो में गंगा, यमुना का उल्लेख किया है। कवि ने शृंगार वर्णन में गंगा की चर्चा अनेक स्थलों पर की है-

मनिमय हार धार बहु सुरसरि तओ नहिं सुखाई।।

.....

काम कम्बु भरि कनक सम्भु परि ढारत सुरसरि धारा।।

.....

भसम भरल जनि संकट रे, सिर सुरसरि जलधार।।

अनेक विद्वान विद्यापति को गंगा जी का भक्त बतलाते हैं। कवि ने गंगा स्तुति भी की है-

कर जोरि बिनमओं बिमल तरंगे

पुन दरसन हो पुनमति गंगे।।

विद्यापति ने परम पवित्र गंगा का बड़ा ही मनोहारी चित्रण किया है। वे काली, वाणी, कमला और गंगा

को एक ही देवी मानते हैं-
कज्जल रूप तुअ काली कहिअए,
उज्जल रूप तुअ बानी।
रविमंडल परचण्डा कहिअए,
गंगा कहिअए पानी।
विद्यापति सागर नागर की गृहबाला शरणागत वत्सला गंगा का वर्णन करते हुए कहते हैं-
ब्रह्म कमण्डलु वास सुवासिनि
सागर नागर गृह बाले।
पातक महिस बिदारन कारन
घृत करवाल बीचि माले।
जय गंगे जय गंगे
शरणागत भय भंगे।।

'कबीर वाणी' और जायसी के 'पद्मावत' में भी गंगा का उल्लेख मिलता है, किन्तु सूरदास और तुलसीदास ने भक्ति भावना से गंगा-माहात्म्य का वर्णन विस्तार से किया है। 'सूरसागर' के नवम स्कन्धा में श्री गंगा आगमन वर्णन है-
सुकदेव कह्यो सुनौ नरनाह। गंगा ज्यौं आई जगमाँह।।
कहौं सो कथा सुनौ चितलाइ। सुनै सो भवतरि हरि पुर जाइ।।
सूरदास के अनुसार राजा अंशुमाल और दिलीप के तप करने पर भी गंगा ने वर नहीं दिया, किन्तु भगीरथ के तप से गंगा जी ने दर्शन दिया-
अंसुमान सुनि राज बिहाइ। गंगा हेतु कियो तप जाइ।।
याही विधि दिलीप तप कीन्हों। पै गंगा जू वर नहिं दीन्हों।।
बहुरि भगीरथ तप बहु कियौ। तब गंगा जू दरसन दियौ।।
.....
गंगा प्रवाह मांहि जो न्हाइ। सो पवित्र ह्वै हरिपुर जाइ।।
महाकवि तुलसीदास ने 'रामचरित मानस' कवितावली और विनय पत्रिका आदि में गंगा के माहात्म्य का उल्लेख अनेक प्रसंगों में किया है-
राम भक्ति जहँ सुरसरि धारा। सरसइ ब्रह्म बिचारि प्रचारा।।
.....
सिय सुरसरहिं कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी।।
.....
कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई।।
.....
चँवर जमुन अरु गंग तरंगा। देखि होंहिं दुख दारिद भंगा।।
रामचरित मानस में गंगा को पतित-पावनी, दारिद्रय-नसावनी, मुक्ति-प्रदायिनी और सबका कल्याण करने वाली बतलाया गया है। 'कवितावली' में गंगा को विष्णुपदी, त्रिपथगामिनी और पापनाशिनी आदि कहा गया है-

जिनको पुनीत वारि धारे सिर पे मुरारि।
त्रिपथगामिनी जसु वेद कहैं गाइ कै।।

गोस्वामी तुलसीदास ने कवितावली के उत्तरकाण्ड में 'श्री गंगा माहात्म्य' का वर्णन तीन छन्दों में किया है- इन छन्दों में कवि ने गंगा दर्शन, गंगा स्नान, गंगा जल सेवन, गंगा तट पर बसने वालों के महत्व को वर्णित किया है- कवि का विचार है कि जिस मनुष्य ने गंगा स्नान के लिए मन में निश्चय मात्र कर लिया, उसकी करोड़ों पीढ़ियों का उद्धार हो गया। उनके लिए देवांगनाएँ झगड़ती हैं, देवराज इन्द्र विमान सजाते हैं, ब्रह्मा पूजन की सामग्री जुटाते हैं और उसका विष्णु लोक में जाना निश्चित हो जाता है-
देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा कहुँ कोटि उधारे।
देखि चले झगरैं सुरनारि, सुरेस बनाइ विमान सवाँरे।
पूजा को साजु विरंचि रचैं तुलसी जे महातम जानि तिहारे।
ओक की लोक परी हरि लोक विलोकत गंग! तरंग तिहारे।।
(कवितावली-उत्तरकाण्ड 145)

वास्तव मे सर्वव्यापी परमब्रह्म परमात्मा जो ब्रह्मा, शिव और मुनिजनों का स्वामी है, जो संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय का कारण है, वही गंगा रूप में जल रूप हो गया है-
ब्रह्म जो व्यापक वेद कहैं, गमनाहिं गिरा गुन-ग्यान-गुनी को।
जो करता, भरता, हरता, सुर साहेबु, साहेबु दीन दुखी को।
सोइ भयो द्रव रूप सही, जो है नाथ विरंचि महेस मुनी को।
मानि प्रतीति सदा तुलसी, जगु काहे न सेवत देव धुनी को।।

(कवितावली-उत्तरकाण्ड 146)
कवि गंगा तट पर बसने का अभिलाषी अवश्य है ; किन्तु वह गंगा दर्शन के प्रभाव से बचना चाहता है-
बारि तिहारो निहारि मुरारि भएँ परसें पद पापु लहौंगो।
ईस ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभु की समताँ बड़े दोष दहौंगो।
बरु बारहिं बार सरीर धरौं, रघुबीर को ह्वै तव तीर रहौंगो।
भागीरथी! बिनवौं कर जोरि, बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो।।

(कवितावली-उत्तरकाण्ड 147)
तुलसीदास ने 'विनयपत्रिका' के चार पदों में गंगा स्तुति की है। तीन पदों में उन्होंने गंगा के विविध नामों का वर्णन करके नाम-स्मरण का प्रभाव दिखलाया है। चैथे पद में गंगा के गुणकथन करते हुए तुलसी कहते हैं-
ईस-सीस बससि, त्रिपथ लससि, नभ-पाताल धरनि।
सुर-नर-मुनि-नाग-सिद्ध-सुजन मंगल करनि।।
देखत दुख-दोष-दुरित-दाह-दारिद-दरनि।
सगर-सुवन-साँसति-समनि, जलनिधि जल भरनि।।
महिमा की अवधि करसि बहु बिधि-हरि-हरनि।
तुलसी करु बानि बिमल, बिमल बारि बरनि।।

भगीरथनंदिनी, विष्णुपदसरोजजा और जाह्न्वी के रूप में गंगा नर-नागों, देवताओं और ऋषिओं मुनियों के लिए वंदनीय है। गंगा के उद्भव (विष्णुपद), वास (ब्रह्म कमण्डल), विकास (भगीरथ नंदिनी), प्रवाह(जाह्न्वी) एवं प्रभाव (कल्पथालिका) का वर्णन दृष्टव्य है-

जय जय भगीरथ नन्दिनि, मुनि-चय-चकोर चन्दिनि,
नर नाग विविध- वन्दिनि जय जन्हु बालिका।
विष्णु पद सरोजजासि, ईस-सीस पर बिभासि,
त्रिपथगासि, पुन्यरासि पाप – दालिका।
बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रय ताप हारि,
भँवर बर त्रिभंगतर तरंग मालिका।
पुरजन पूज्योपहार सोभित ससि धवल धार,
भंजन भव-भार भक्ति कल्प थालिका।
निजतट बासी बिहंग जल-थल चर पसु पतंग,
कीट जटिल तापस सब सरिस पालिका।।

मुस्लिम कवियों में रहीम दास की अपार श्रद्धा हिन्दी देवी-देवताओं में थी। वे माँ गंगा की वंदना करते हुए कहते हैं-

“विष्णु के श्री चरणों से निकलने वाली, शिव के सिर मालती की माला की भाँति सुशोभित होने वाली माँ! मुझे विष्णु रूप न बनाकर शिव रूप ही बनाना, जिससे मैं आपको अपने सिर पर धारण कर सकूँ-

अच्युत चरण तरंगिणी, शिव सिर मालति माल।
हरि न बनायो सुरसरी, कीजौ इंदव भाल।।

रीतिकाल में केशवदास, सेनापति, पद्माकर आदि ने गंगा प्रभाव का वर्णन किया है जिनमें सेनापति और पद्माकर का गंगा वर्णन श्लाघनीय है। सेनापति ‘कवित्त रत्नाकर’ में गंगा माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहते हैं कि पाप की नाव को नष्ट करने के लिए गंगा की पुण्यधारा तलवार सी सुशोभित है-

पावन अधिक सब तीरथ तैं जाकी धार,
जहाँ मरि पापी होत सुरपुर पति है।
देखत ही जाकौ भलो घाट पहचानियत,
एक रूप बानी जाके पानी की रहति है।
बड़ी रज राखै जाकौं महाधीर तरसत,
सेनापति ठौर-ठौर नीकीयै बहति है।
पाप पतवारि के कतल करिबे को गंगा,
पुण्य की असील तरवारि सी लसति है।।

सेनापति कहते हैं कि श्री राम के चरण कमलों को पाने का अंधों की लकड़ी की भाँति एक उपाय है कि श्री राम पद संगिनी तरंगिनी गंगा को पकड़ा जाये, उसका स्पर्श किया जाये, उसकी वंदना की जाये-

एकै है उपाय राम पाइन को पाइबै कौं,
सेनापति वेद कहैं अंध की लकरियै।
राम पद संगिनी तरंगिनी है गंगा तातैं,

याही पकिरे तैं पाइं राम के पकरियै।।

रीतिकालीन कवियों में पद्माकर ने गंगा की महिमा और कीर्ति का वर्णन करने के लिए 'गंगा लहरी' नामक ग्रंथ की रचना की है। इसमें भौतिक वैभव और सुख समृद्धि के प्रति वितृष्णा, पूर्वकृत पापों के लिए पश्चाताप एवं आन्तरिक वेदना तथा भक्ति-भावना का समन्वय मिलता है। इस ग्रंथ में सत्तावन छन्द हैं। ये छन्द गंगा की ही भाँति अति प्रवाहमय और रमणीय हैं-

पापन की भाँति महामन्द मुख मैली भई,
दीपति दुचंद फैली धरम समाज की।
कहैं पद्माकर त्यों रोगन की राह परी,
दाह परी दुखन में गाह अति गाज की।
जा दिन ते भूमि माँहि भागीरथी आनी जग,
जानी गंगा धारा या अपारा सब काज की।
ता दिन ते जानीसी बिकानी बिलानीसी,
बिलानीसी दिखानी राजधानी जमराज की।।

.....

पायो जिन धौरी धारा में धसत पात,
तिनको न होत सुरपुर ते निपात है।
कहैं पद्माकर तिहारो नाम जाके मुख,
ताके मुख अमृत को पुंज सरसात है।
तेरो तोय छबै करि छुवति तन जाको बात,
तिनकी चलै न जमलोकन में बात है।
जहाँ जहाँ मैया धूरि तेरी उड़ि जात गंगा,
तहाँ तहाँ पावन की धूरि उड़ि जात है।।

पद्माकर गंगा प्रभाव वर्णन करते हुए कहते हैं कि गंगा विधि के कमण्डल की सिद्धि है, हरिपद प्रताप की नहर है, शिव के सिर की माला है। अंतत: वह कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है-

बिधि के कमण्डल की सिद्धि है प्रसिद्ध यही,
हरिपद पंकज प्रताप की नहर है।
कहै पद्माकर गिरीस सीस मण्डल के,
मुण्डन की माल तत्काल अघ हर है।
भूषित भगीरथ के रथ की सुपुन्य पथ,
जन्हु जप जोग फल फैल की लहर है।
छेम की छहर गंगा रावरी लहर,
कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है।

इस सन्दर्भ में आधुनिक काल के कवियों में जगन्नाथदास रत्नाकर का नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय है। 1927 में रचित तथा 1933 में प्रकाशित उनके ग्रंथ 'गंगावतरण' में कपिल मुनि के शाप से शापित सगर के साठ हजार पुत्रों के उद्धार के लिए भगीरथ की भगीरथ तपस्या से गंगा के भूमि पर अवतरित होने की

कथा है। सम्पूर्ण ग्रंथ तेरह सर्गों में विभक्त और रोला छन्द में निबद्ध है। रत्नाकर जी के 'गंगावतरण' का आधार चतुर्थ सर्ग को छोड़कर 'बाल्मीकि रामायण' की कथा है। 'गंगावतरण' के अनेक छन्द तो बाल्मीकि रामायण के भावानुवाद हैं; यथा-

घृत पूर्णेषु कुंभेषु धान्यस्तान्समवर्धयन्।
कालेन महता सर्वे यौवनं प्रतिपेदिरे।।
(बाल्मीकि रामायण)

दीरघ घृत घट घालि पालि ते धाइ बढ़ाए।
समय संग सब अंग रूप जो बन अधिकाए।।
(गंगावतरण)

गंगावतरण में गंगा कलिकाल हरनी और पतित पावनी रूप में वर्णित है-

पापी पतित स्वजाति व्यक्त सौ सौ पीढ़िनि के।
धर्म बिरोधी कर्म भ्रष्ट च्युत स्रुति सीढ़िनि के।
तव जल श्रद्धा सहित न्हाइ हरिनाम उचारत।
ह्वै सब तन मन सुद्ध होंहिं भारत के भारत।।
.....
जय बिधि संचित सुकृत सार सुखसागर संगिनि।
जय हरि पद मकरन्द मंजु आनन्द तरंगिनि।।
जय संग सकल कलि मल हरनि विमल वरद बानी करो।
निज महि अवतरन चरित्र के भव्य भाव विमल उर में भरो।।

आधुनिक काल के अन्य कवियों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, सुमित्रानन्दन पन्त, नन्दकिशोर मिश्र, कवि सत्यनारायण, श्रीधर पाठक और अनूप शर्मा आदि ने भी यत्र-तत्र गंगा माहात्म्य का वर्णन किया है। यहाँ यह ध्यान दिला देना भी अपेक्षित है कि मुसलिम कवियों में रसखान, रहीम, ताज, मीर, जमुई खाँ आजाद और वाहिद अली वाहिद आदि ने भी गंगा प्रभाव का सुन्दर वर्णन किया है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने सन १८७२ में रचित 'बैशाख माहात्म्य' और सन १८८३ में रचित 'कृष्णचरित्र' के अन्तर्गत जन्हु-तनया, शिव-जटा-जूट जलाधिकृत वासिनी गंगा का वर्णन किया है। जाह्न्वी नाम की सार्थकता सिद्ध करते हुए वे कहते हैं-

माधव सुदि सप्तमि कियो क्रुद्ध जन्हु जलपान।
छोड़्यो दक्षिण कर्ण ते तातें पर्व महान।
ताही सों जाह्न्वी भई ता दिन सों श्री गंग।
तिनको उत्सव कीजिए तादिन धारि उमंग।।

विष्णुपदी गंगे सभी लोकों को पवित्र करने वाली, अघ ओघ की बेड़ियों को काटने वाली, पतितों का उद्धार करने वाली तथा दु:खों को विदीर्ण करने वाली है-

जयतु जह्नु-तनया सकल लोक की पावनी
सकल अघ-ओघ हर-नाम उच्चार में,
पतित जन उद्धरनि दुक्ख बिद्रावनी।
कलि काल कठिन गज गर्व सर्वित करन,

सिंहनी गिरि गुहागत नाद आवनी।

.....

जै जै विष्णु-पदी गंगे।
पतित उघारनि सब जग तारनि नव उज्ज्वल अंगे।
शिव शिर मालति माल सरिस वर तरल तर तरंगे।
'हरीचन्द' जन उधरनि पाप-भोग-भंगे।

.....

गंगा तुमरी साँच बड़ाई।
एक सगर सुत हित जग आई तार्यो नर समुदाई।
एक चातक निज तृषा बुझावत जाँचत धन अकुलाई।
सो सरवर नद नदी बारि निधि पूरत सब झर लाई।
नाम लेत पिअत एक तुम तारत कुल अकुलाई।
'हरीचन्द' याही तें तो सिव राखौं सीस चढ़ाई।।

छायावादी कवियों का प्रकृति वर्णन हिन्दी साहित्य में उल्लेखनीय है। सुमित्रानन्दन पन्त ने 'नौका विहार' में ग्रीष्म कालीन तापस बाला गंगा का जो चित्र उकेरा है, वह अति रमणीय है। उन्होंने 'गंगा' नामक कविता भी लिखी है-

सैकत शैया पर दुग्ध धवल, तन्वंगी गंगा ग्रीष्म विरल
लेटी है श्रान्त क्लान्त निश्चल।
तापस बाला गंगा निर्मल शशि मुख से दीपित मृदु कर तल
लहरें उस पर कोमल कुन्तल।
गोरे अंगों पर सिहर-सिहर लहराता तार तरल सुन्दर
चंचल अंचल-सा नीलाम्बर।
साड़ी की सिकुड़न-सी जिस पर शशि की रेशमी विभा से भर
सिमटी है वर्तुल मृदुल लहर।

महाकवि निराला ने अपने काव्य में गंगा-यमुना का उल्लेख अनेक स्थलों पर किया है और पतित पावनी गंगा पर एक स्वतंत्र कविता लिखकर गंगा के प्रति अपनी श्रद्धा भी समर्पित की है।

वाहिद अली 'वाहिद' ने अपनी कविता के माध्यम से स्पष्ट किया है कि गंगा सन्त-असन्त, मुल्ला-महन्त सभी को गले लगाती है तथा ध्यान-अजान और कुरान-पुरान से भारत को एक बनाती है-

माँ के समान जगे दिन-रात जो प्रात हुई तो जगाती है गंगा।
कर्म प्रधान सदा जग में, सबको श्रम पंथ दिखाती है गंगा।
सन्त-असन्त या मुल्ला-महन्त सभी को गले से लगाती है गंगा।
ध्यान-अजान, कुरान-पुरान से भारत एक बनाती है गंगा।

गंगा नदी के महत्व को आर्य-अनार्य, वैष्णव-शैव, साहित्यकार-वैज्ञानिक सभी स्वीकार करते हैं; क्यों कि गंगा इनमें कोई भेद नहीं करती है। सभी को एक सूत्र में पिरोती है और एक सूत्र में बाँधे रखने का संकल्प प्रदान करती है गंगा।

निरन्तर गतिशीला गंगा श्रम का प्रतीक है। केवल राष्ट्र की एकता और अखण्डता पर्याप्त नहीं है, सम्पन्न होना भी आवश्यक है और यह तभी संभव है जब श्रम के महत्व को समझा जाये। गंगा अनवरत श्रमशीला बनी रहकर सभी को अथक, अविरल श्रम करने का संदेश देती है। श्री रामदास जी कपूर 'गंगा श्रम' में श्रमशीला गंगा से प्रार्थना करते हैं-

ब्रह्मा के निरूपण में सगुण स्वरूपिणी हो,
राष्ट्र को अपौरुषेय दृष्टि विष्णु वाली दे।
विधि के कमण्डल से संभव विधा की सीख,
सृजन कला की प्रतिभा अंशुमाली दे।
शम्भु उत्तमांग का अलभ्य ज्ञान चक्षु खोल,
पाशुपत संयुत सुसैन्य शक्तिशाली दे।
इन्दिरा-इरा की सृष्टि व्यापिनी समृद्धि हेतु,
भागीरथी! श्रम की भगीरथ प्रणाली दे।।

.....

गंगा! दो अमोघ वर श्रम को सराहे नर,
भक्ति की प्रबल शक्ति आप में सचर जाय।
बँध एक सूत्र में स्वराष्ट्र बढ़े पौरुष से,
युद्धकारियों की युद्ध लालसा बिखर जाय।.....

इस प्रकार गंगा जीवन तत्त्व है, जीवन प्रदायिनी है, इसीलिए माँ है। हमारा पौराणिक इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि गंगा केवल भारत-भूमि मात्र में ही नहीं वरन् वह आकाश, पाताल और इस पृथ्वी को मिलाती है और मंदाकिनी, भोगावती तथा भागीरथी की संज्ञा पाती है। इसी कारण ऋग्वेद, महाभारत, रामायण एवं अनेक पुराणों में गंगा को पुण्य सलिला, पाप-नाशिनी, मोक्ष प्रदायिनी, सरित् श्रेष्ठा एवं महानदी कहा गया है।

(लेखक वरिष्ठ साहित्यकार हैं व कई पुस्तकें लिख चुके हैं।)

साभार http://www.abhivyakti-hindi.org/ से